UGC Approved Journal No - 40957
ISSN 0974 - 7648

JIGYASA

An Interdisciplinary Peer Reviewed Refereed Research Journal

जिज्ञासा

Chief Editor :
Indukant Dixit

Executive Editor :
Shashi Bhushan Poddar

Editor :
Reeta Yadav

UGC Approved Journal No – 40957
(IIJIF) Impact Factor- 5.172
Regd. No. : 1687-2006-2007

ISSN 0974 - 7648

JIGYASA

AN INTERDISCIPLINARY PEER REVIEWED REFEREED RESEARCH JOURNAL

Chief Editor : *Indukant Dixit*

Executive Editor : *Shashi Bhushan Poddar*

Editor
Reeta Yadav

Volume 15 | September 2022 | No. III

Published by
PODDAR FOUNDATION
Taranagar Colony
Chhittupur, BHU, Varanasi
www.jigyasabhu.com
E-mail : jigyasabhu@gmail.com
Mob. 9415390515, 0542 2366370

- **ग्रामोदय की अवधारणा एवं सिद्धान्त** 201-207
  सुमन पाण्डेय, प्रवक्ता (इतिहास), राजकीय आश्रम पद्धति बालिका इण्टर कॉलेज, गौरा, मेहनगर, आजमगढ़
- **सल्तनत कालीन मिथिला की राजनैतिक स्थिति** 208-215
  डॉ. सुमन कुमार, पीएच. डी. (इतिहास), बी. आर. ए. बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर
- **इंदौर घराने की प्रसिद्ध गायिका विदुशी शांति शर्मा की गुरू के रूप में विशिष्ट भूमिका -एक अध्ययन** 216-220
  डॉ. गोविन्द सिंह बोरा, एसोसिएट प्रोफेसर (संगीत विभाग), एम.बी. जी.पी.जी. कॉलेज हल्द्वानी
  मोनी जोशी, शोधार्थी (संगीत विभाग), एम.बी.जी.पी.जी. कॉलेज हल्द्वानी
- **हिन्दी साहित्य में आदिवासी विमर्श** 221-224
  पुष्पेश कुमार, शोध छात्र, नव नालंदा महाविहार मानित वि.वि.,नालंदा
  प्रो. हरेकृष्ण तिवारी, शोध निर्देशक, नव नालंदा महाविहार मानित वि.वि.,नालंदा
- **डॉ अम्बेडकर का तत्वमीमांसीय दृष्टिकोण** 225-230
  संध्या कुमारी, सहायक प्राध्यापक, दर्शनशास्त्र विभाग, ललित नारायण तिरहुत महाविद्यालय, मुजफ्फरपुर
- **तनाव, परिवर्तन की किसी माँग के प्रति एक अविशेष अनुक्रिया' है।** 231-236
  अनंत नारायण मिश्रा, शोध छात्र, समाजकार्य, समाजशास्त्र विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी
- **भारत छोड़ो आन्दोलन के अग्रदूत 'बिहार केसरी' श्रीकृष्ण सिंह** 237-242
  विकाश नन्दन, शोध छात्र, इतिहास विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी, उ.प्र.
- **सेक्स/जेंडर भेद : नारीवादी नजरिया** 243-251
  डॉ. संजय शर्मा, अध्यक्ष-राजनीति विज्ञान विभाग, सहकारी पी.जी. कॉलेज, मिहरावां, जौनपुर
- **महिला सशक्तिकरण एवं सामाजिक सहभागिता : एक अध्ययन** 252-256
  अमित कुमार गौंड, असि. प्रोफेसर-समाजशास्त्र, डॉ. भीमराव अम्बेडकर राजकीय महाविद्यालय, महराजगंज।

सेक्स/जेंडर भेद : नारीवादी नजरिया

डॉ. संजय शर्मा*

नारीवाद एक विचारधारा के साथ–साथ एक आन्दोलन भी है। सभी नारीवादी एक बात को लेकर सहमत हैं कि ज्यादातर समाज में महिलाओं की स्थिति पुरुषों की अपेक्षा निम्न है। इनको दोयम दर्जे का माना गया है। महिलाओं के साथ लैंगिक भेदभाव किया जाता है। नारीवादी सिद्धान्त की एक महत्त्वपूर्ण देन यह है कि इसने सेक्स/जेंडर भेद को पूर्णतः स्पष्ट किया। इसकी समस्त धाराओं में यह अन्तर भिन्न–भिन्न रूपों में विकसित हुआ जिसने मौजूदा भेद संबंधी सोच को पेचीदा बना दिया। इसमें एक नई समझ भी जुड़ गयी कि 'सेक्स प्रकृति से जुड़ा है और जेंडर संस्कृति से' सम्बन्धित है। शोधपत्र में 'सेक्स/जेंडर भेद : नारीवादी नजरिया' पर विचार किया गया है। शोध में द्वितीयक स्रोत प्रयोग में लाए गए हैं।

सेक्स/जेंडर भेद के सन्दर्भ में पूर्व के अध्ययन हैं– डोर्थी डिनरस्टेन, 'द मरमेड एण्ड मिनोचर : सेक्सुअल अरेंजमेंट्स एण्ड ह्यूमन मैलिस' (1976), एलीसन ज़ैगर, 'फेमिनिस्ट पॉलिटिक्स एण्ड ह्यूमन नेचर' (1983), मिशेल बैरेट, 'वूमेन्स आपरेशन टुडे' (1988), ज्यूडिथ बटलर 'जेंडर ट्रबुल' (1990), केरॉल गिलीगन, 'इन डिफरेन्ट वॉयस : साइकोलॉजी एण्ड वूमेन्स डेवलपमेंट' (1993), सुजेन जे केसलर "द मेडिकल कंस्ट्रक्शन ऑफ जेंडर : केस मैंनेजमेन्ट एण्ड इंटरसेक्सड इनफैन्ट्स' एन सी हरमन, एबीगेल स्टीवार्ट (संपा०) 'थियराइजिंग फैमिनिज्म' (1994), नेली उडशूर्न 'वियाड द नेचुरल बॉडी एन आर्कियोलॉजी ऑफ सेक्स' (1994), सूजी थारू तेजस्विनी निरंजना 'प्राब्लम्स फार इन कंटेम्परेरी थियरी ऑफ जेंडर' निवेदिता मेनन (संपा०) 'जेंडर एण्ड पॉलिटिक्स' (1999), एन फाउस्टो स्टर्लिंग, "द फाइन सक्सेज : बाई मेल एण्ड फीमेल आर नाट एनफ" क्रिस्टीन एल विलियम्स एरलिन स्टेन (संपा०) 'सेक्सुअलिटी एण्ड जेंडर' (2002), शेफाली मोइत्रा 'फेमिनिस्ट थॉट एन्ड्रोसेन्टरिज्म कम्यूनिकेशन एण्ड ओब्जेक्टिविटी' (2002), शर्मिला रेगे, 'सोशियोलाजी ऑफ जेन्डर : द चैलेन्ज ऑफ फेमिनिस्ट सोशियोलॉजिकल नालेज' (2003), शिरा टैरेंट 'व्हेन सेक्स बिकम जेंडर' (2006) क्लेयर चैम्बर्स, 'जेंडर इन मैकिनान' (2008), शुभ्रा परमार, 'नारीवादी सिद्धान्त और व्यवहार' (2019), व करुणेश प्रताप मिश्र 'समकालीन राजनीतिक सिद्धान्त' (2020)। ये अध्ययन सेक्स/जेंडर में भेद करते हैं व बताते हैं कि एक जैविक है तो दूसरा सामाजिक–सांस्कृतिक। निवेदिता मेनन ने अपने अध्ययन में सेक्स/जेंडर भेद के विषय में व्यापक अध्ययन किया है। ऐलिसन जैग्गर, मिशेल बैरेट, कैरोल गिलीगन, केसलर, रूथ

* अध्यक्ष-राजनीति विज्ञान विभाग, सहकारी पी.जी. कॉलेज, मिहरावां, जौनपुर

ब्लियर, फाक्स आदि इस विभाजन के बारे में अपनी अलग–अलग राय रखती हैं।

फेमिनिज्म शब्द को प्रयोग में लाने का श्रेय काल्पनिक समाजवादी चार्ल्स फूरियर को है। 1892 के पेरिस अंतर्राष्ट्रीय महिला सम्मेलन में यह स्त्री–पुरुष समानता के सन्दर्भ में प्रयोग हुआ। यह एक विचारधारा के साथ–साथ आन्दोलन भी है। अधिकांश विद्वानों का मानना है कि फेमिनिज्म शब्द नारीवाद की ऐसी बौद्धिक प्रतिबद्धता और राजनीतिक आन्दोलन है, जिसका उद्देश्य महिलाओं को समानता और न्याय दिलाना और पितृसत्ता या लिंग आधारित पूर्वाग्रह की प्रवृत्ति की समाप्ति से है।[2] इसके विकास को तीन लहरों में विभाजित किया जाता है– पहली लहर 1792 से 1963 तक, दूसरी लहर 1963 से 1980 तक और तीसरी लहर 1980 से आज तक है। पहली लहर के चिंतकों में मेरी बोल्सस्टोनक्राफ्ट, सुसान बी० एंथनी, ओलंपिया ब्राउन प्रमुख हैं। इस लहर के मुख्य मुद्दे थे– महिलाओं के कानूनी अधिकार, मताधिकार, परिवार भत्ता, गर्भपात, घरेलू श्रम, महिला सुरक्षा। दूसरी लहर के चिंतकों में सिमोन द बुऑ, केरल हैनिश, बेट्टी फाइडन, केट मिलेट, शुलामिथ फायरस्टोन मुख्य हैं। इस लहर के मुख्य मुद्दे थे– कानूनी असमानता, नौकरियों में लाभ, वैवाहिक बलात्कार कानून, बलात्कार, महिलाओं के लिए आश्रय स्थल बनाने, तलाक कानूनों में बदलाव, लैंगिक असमानता। दूसरी लहर मुख्य रूप से महिला की पहचान पर जोर देकर कई दशकों की राजनीतिक सोच को एक साथ पेश करती है।[3] तीसरी लहर की चिंतकों में रेबेका वाकर, एलिस वाकर, एनज़ालडुआ, बारबरा स्मिथ, एल क्लार्क मुख्य हैं। घरेलू उत्पीड़न, गर्भपात संबंधी अधिकार, आय में समानता, कार्य स्थल पर यौन शोषण इस काल के मुद्दे थे। महिलाओं के कई रंगों, जातियों, राष्ट्रीयता, धर्म और सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य में तीसरी लहर विविधता और परिवर्तन को गले लगाती है।[4] इन कालों में नारीवाद की उदारवादी, समाजवादी, मार्क्सवादी, रेडिकल, परिस्थितिकी विचारधारा अस्तित्त्व में आई। सिल्विया बॉल्वय का मत है कि लिंग की अवधारणा का प्रयोग आज सामाजिक विज्ञान के क्षेत्र में अपेक्षाकृत नए रूप में किया जा रहा है। यह व्याकरण का एक शब्द है, जो संज्ञा को वर्गीकृत करने के लिए प्रयोग में लाया जाता रहा है, जैसे– महिला पुरुष या हिजड़ा।[5] अंग्रेजी भाषा में यह जैविक लिंग अन्तर के लिए प्रयोग होता है। जैसे–पुरुष और स्त्री, शेर और शेरनी।

प्राचीन समय से ही स्त्रियों को प्राकृतिक रूप से कमतर समझा जाता रहा है। इसी आधार पर पुरुषों की अपेक्षा महिलाओं की निम्न सामाजिक स्थिति को उचित ठहराया जाता है। सुकरात पूर्व सोफिस्ट विचारक पाइथागोरस ने दस विरोधी जोड़ो 'सीमित/असीमित, एक/अनेक, विषम/सम, सरल/वक्र, वर्ग/आयत, स्थिरता/गति, प्रकाश/अन्धकार, दायां/बायां, शुभ/अशुभ, स्त्री/पुरुष[6] के आधार पर संसार का वर्णन

किया। एनेजीमेण्डर व एनेमीज ने इन्हें एक दूसरे पर निर्भर बताया। हेरक्लाइटस का मानना है कि इनमें कुछ ऐसा सामान्य है जो इनके बीच सामंजस्य बनाता है। वह कहता है, 'नमकीन पानी किसी जीव के लिए लाभकारी है तो किसी जीव के लिए हानिकारक, मृत्यु व जीवन परस्पर आश्रित हैं उसी प्रकार नारी और पुरुष एक दूसरे से जुड़े हैं।'[7] प्लेटो का मानना है कि दार्शनिक विमर्श और चिंतन मानव सुलभ कार्यों में सर्वोत्तम है, किन्तु गुलामों, वहशियों और स्त्रियों को इससे दूर ही रखा जाना चाहिए। गुलामों और वहशियों को उनकी कमजोर स्थिति के कारण और स्त्रियों को उनकी स्वभावगत कमजोरियों के चलते।[8] प्लेटो के शिष्य अरस्तू का कहना है कि औरत कुछ गुणवत्ताओं की कमियों के कारण औरत बनती है।[9] देकार्त बुद्धिवाद का प्रतिपादक है जिसने मन व शरीर का विभाजन किया। जेनवीव लॉयड का कथन है कि देकार्त अपने आत्म विषयक तर्क को बौद्धिक व अबौद्धिक दोनों वस्तुओं से जोड़ते हैं। बौद्धिकता को पुरुष एवं अबौद्धिकता को नारी से जोड़ते हैं।[10] जेना टोम्पसन ने भी माना कि बुद्धि एवं शरीर के द्वैत से ही लैंगिक विभेद उत्पन्न हुआ है।[11] मिल ने अपनी पुस्तक 'सब्जेक्शन ऑफ द वूमेन' में नारी असमानता को उजागर किया अपनी पुस्तक में उन्होंने पुरुष वर्चस्ववाद का विरोध किया। वह लैंगिक आधार पर कार्य विभाजन को गलत करार देता है। वह बताते हैं कि 'समाज में योग्यता को स्थान प्राप्त है लेकिन अकेली स्त्री इसका अपवाद है, जिन्हें नारी होने के कारण विशेष कार्य सौंपे जाते हैं, जिन्हें योग्यता के आधार पर कार्य नहीं मिलता।'[12] नीत्शे नारी को खेल के साथ जोड़कर देखता है। उसके लिए नारी मात्र मनोरंजन का साधन है। नीत्शे कहता है 'योद्धा हमेशा खेल और संकट पसन्द करता है, इसलिए वह नारी को पसन्द करता है। नारी सबसे खतरनाक खेल है।'[13] काम्टे, लॉक जैसे विचारक भी स्त्री को नैसर्गिक रूप से कमजोर बताते हैं।

नारीवादी चिंतकों ने तर्क दिया कि प्राचीन समय से लेकर आधुनिक युग तक के विचारकों ने महिलाओं की कमजोर सामाजिक–राजनीतिक स्थिति को उनके नैसर्गिक जैविक गुणों के आधार पर उचित बताया जो कि गलत है। चिंतकों ने तर्क के सहारे स्त्री शोषण को वैधता प्रदान की। माना गया कि यह प्राकृतिक है अतः इससे बचा नहीं जा सकता। इन कारकों के प्रभाव को 'जैव निर्धारणवाद' की संज्ञा दी गयी। नारीवादी चिंतकों ने 'जैव निर्धारणवाद' को चुनौती दी। इस विचार का सशक्त विरोध सीमोन दि बुआ ने किया व कहा 'औरत जन्म नहीं लेती बल्कि बन जाती है', वह बताती हैं कि 'मानव जाति में औरत एक पृथक अस्तित्त्व, एक तथ्य है। औरत मानवता का एक हिस्सा है। यह बात अलग है कि हमें सिखाया जाय कि आज नारीत्त्व खतरे में है। औरत को औरत होना सिखाया जाता है। औरत बनी रहने के लिए अनुकूल किया जाता है।'[14] इस विचार के बारे में ख्याति प्राप्त लेखक विश्वनाथ मिश्र कहते हैं 'स्त्री जन्म नहीं लेती, इस वाक्यांश का

अस्तित्त्ववादी तर्क प्रणाली का आशय यह कि जन्म से पूर्व स्त्री का कोई सार (एसेंस) नहीं होता है, बल्कि बना दी जाती है, इस वाक्यांश का अस्तित्त्ववादी तर्क–प्रणाली का आशय यह है कि जन्म से ही स्त्री का सार पितृसत्तात्मक समाज द्वारा सुनिश्चित कर दिया जाता है। अब यदि अस्तित्त्ववादी दर्शन की मुख्य मान्यता यह है कि अस्तित्त्व सार का पूर्ववर्ती है तब पितृसत्तात्मक समाज में तो स्त्री को अपने अस्तित्त्व को साकार करने ही नहीं दिया जाता है, बल्कि उसे पितृसत्तात्मक समाज द्वारा बनाये गये सार के अनुरूप ही अपने को ढालना पड़ता है।'[15] सीमोन द बुआ ने सर्वप्रथम सेक्स व जेंडर में भेद किया उन्होंने बताया कि किसी प्रजाति में नर या मादा होना एक जैविक स्थिति है, यह प्रजनन अंग से निर्धारित होता है जो कि नैसर्गिक है व इसका सामाजिक भूमिका से कोई ताल्लुक नहीं है। लिंग एक सामाजिक–सांस्कृतिक रचना है, लैंगिक भेदभाव आरोपित है।

मार्गरेट मीड जैसी नारीवादी–मानव शास्त्री कहती हैं कि 'विभिन्न संस्कृतियों में पुरुषत्त्व व नारीत्त्व को अलग–अलग रूपों में समझा गया है। इसलिए इनके बीच कोई सीधा संबंध नहीं है। वे बताती हैं कि लैंगिक विभाजन को किसी भी रूप में प्राकृतिक नहीं माना जा सकता। ओकिन कहती हैं कि 'अधिकांश पुरुष सिद्धान्तकार इस मान्यता को मानते रहे कि इस बात का 'प्राकृतिक आधार' है कि महिलाओं को परिवार तक सीमित रहना चाहिए, साथ ही वे यह भी मानते रहे कि इस बात का भी 'प्राकृतिक आधार' है कि महिलाओं को कानूनी और प्रथागत रूप से परिवार के भीतर 'पति की अधीनता' में रहना चाहिए।'[16] शर्मिला रेगे अपनी पुस्तक 'सोशियोलाजी ऑफ जेंडरः द चैलेन्ज ऑफ फेमिनिस्ट सोशियोलॉजिकल नालेज' में कहती हैं, 'लिंग से अभिप्राय एक ऐसी विविध और जटिल प्रक्रिया से है जिसमें प्रजनन क्षमता, शारीरिक श्रम और सांस्कृतिक कार्यों के आधार पर महिलाओं और पुरुषों में भेदभाव 'यौन डिवीजन' किया जाता है।'[17] स्टोलर ने मनोविज्ञान की विश्लेषणात्मक पद्धति का प्रयोग महिला–पुरुष के बीच लिंग भेद को दिखाने के लिए किया है। केट मिलेट, मिशेल, रूबिन इस अवधारणा को असमानता और उत्पीड़न के रूप में देखती हैं। जोआन स्कॉट का कहना है कि 'लिंग एक ऐसी सामाजिक श्रेणी है जिसमें लिंग को जैविक शरीर के ऊपर थोपा गया है जिसमें सामाजिक, सांस्कृतिक और जैविक शरीर को लिंग और कामुकता की राजनीति में उभरते हुए देखा जा सकता है।'[18] ब्राडली हेरियर का कहना है कि, 'लिंग से तात्पर्य एक ऐसी व्यवस्था से है जिसमें महिलाओं और पुरुषों की विविध और जटिल व्यवस्थाओं जिसमें लिंगों के प्रजनन कार्य श्रम पर आधारित अन्तर और सांस्कृतिक यौन अन्तर को संदर्भित किया जाता है।'[19] हैवलाक एलिस ने सेक्स से जुड़े भेद को तीन स्तरों में विभाजित किया है– 'प्राथमिक मतभेद जो यौन अंगों पर आधारित होते हैं। माध्यमिक मतभेद जो स्तन, शरीर के बालों का विकास, प्रजनन व्यवस्था से जुड़े होते हैं। तृतीय मतभेद जो

व्यवहार जैसे आक्रामता देखभाल, दावा इत्यादि पर आधारित होते हैं।'[20]

जेंडर समाज निर्मित है जो स्त्री–पुरुष के सन्दर्भ में विषमता को बताता है। जेंडर समाज में मुख्यतः तीन बातों पर जोर देता है– पहला स्त्री और पुरुष में विशेष व्यक्ति कौन है? दूसरा यह स्त्री और पुरुष की असमानता को दर्शाता है। तीसरा यह सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक लाभों के असमान वितरण और भागीदारी को दर्शाता है।[21] जोन वालाश स्कॉट बताते हैं कि जेंडर एक निरन्तर प्रवाहमान प्रक्रिया है जिसमें यौनिक भिन्नताएं सामाजिक तथा सांस्कृतिक आधारों पर निर्मित अर्थ ग्रहण कर लेती है। जेंडर आधृत सामाजिक ढाँचा स्त्री हित विरुद्ध होता है। इसमें पुरुष प्राथमिक भूमिका में और स्त्री की भूमिका द्वितीयक हो जाती है। अनुरुद्ध देशपाण्डे बताते हैं कि 'पितृसत्ता ऐसी प्रणाली है जिसमें पुरुषों का महिलाओं पर प्रभुत्त्व होता है और पुरुष भी महिलाओं के श्रम के उपयोग कर्ता और उनकी यौनिकता तथा प्रजनन क्षमता के नियामक होते हैं।'[22] कैरोल पिटमेन का कहना है कि 'पितृसत्तात्मक व्यवस्था में पौरूष और नारीत्त्व का अन्तर स्वतंत्रता और परतंत्रता के राजनीतिक अन्तर जैसा है। नारीवादी सिद्धान्त में पितृसत्ता के अन्तर्गत उन सभी सामाजिक प्रणालियों को शामिल किया जाता है जो स्त्रियों पर पुरुषों के दबदबे के कारण और वाहक हों। नारीवादी सिद्धान्त में पितृसत्ता को प्रायः ऐसी सामाजिक निर्मित माना जाता है जिसके विविध रूपों को उजागर करके और उनका आलोचनात्मक विश्लेषण करके ही उससे मुक्ति पाई जा सकती है।'[23]

सेक्स, पुरुष व महिला के बीच जैविक अन्तर प्रदर्शित करता है। यह स्थायी व सार्वभौमिक है। लिंग कृत्रिम है। नारीवादी लेखिका निवेदिता मेनन कहती हैं, 'प्रकृति से सेक्स का वही रिश्ता है जो संस्कृति से जेंडर का है। सेक्स या लिंग शब्द का उपयोग पुरुषों और महिलाओं में जैविक अन्तर बताने के लिए किया जाता था। इसी तरह जेंडर शब्द का उपयोग इस बुनियादी अन्तर से सम्बन्धित व्यापक सांस्कृतिक अर्थ को बताने के लिए किया गया। पुरुषों और महिलाओं के बीच जैविक अन्तर के आधार पर ही महिलाओं की अधीनता को बुनियादी रूप से सही माना जाता रहा है।'[24] प्रथम नारीवादी लेखिका एलिसन जैग्गर ने माना कि सेक्स व जेंडर आपस में द्वन्द्वात्मक रूप से जुड़े हैं। जैग्गर व अन्य चिंतकों का तर्क है कि आरम्भ में नारीवादियों ने जो वैचारिक परिभाषा दी वह एक खास बिन्दु से आगे नहीं बढ़ पाती है। इनका मत है कि मानव–जीव विज्ञान का निर्माण मानव शरीर, भौतिक वातारण, तकनीक व समाज के मध्य जटिल अन्तः क्रिया से होता है। इसीलिए जैग्गर बताती हैं कि 'इन्सान का हाथ श्रम का औजार ही नहीं, श्रम की उपज भी है।'[25] कहने का मतलब यह है कि बाहरी वातावरण बदलता है तो वह मानव शरीर निर्माण का आकार देता है। निवेदिता मेनन बताती हैं कि यह बात दो अर्थों में सही है पहली दीर्घकालिक विकासात्मक अर्थ में.....दुनिया के विभिन्न भागों में मनुष्य के शरीर का अलग–अलग

तरीके से विकास होता है। इसका कारण यह है कि लोगों के खान–पान, जलवायु और उनके द्वारा किए जाने वाले कामों की प्रकृति में अन्तर होता है।.....अल्पकालिक अर्थ में.....जिस तरह लोगों की सामाजिक अन्तः क्रिया उनकी तंत्रिका–संरचना और हार्मोनों के संतुलन से प्रभावित होती है, उसी तरह लोगों की तंत्रिका संरचना और हार्मोनों का संतुलन सामाजिक व्यवहार से प्रभावित होता है। डीरीथी डिनरस्टीन के विचार ध्यान देने योग्य हैं, वह लिखती हैं 'मानव प्रकृति से ही अप्राकृतिक होते हैं। मसलन हम अभी तक अपने पिछले पैर से प्राकृतिक रूप से नहीं चल पाते हैं। आगे की ओर झुकना कमर में दर्द होना और हार्निया जैसी बीमारियाँ इस बात की द्योतक हैं कि शरीर ने खुद को लंबवत रूप में रहने की स्थिति में नहीं ढाला है। दरअसल यंत्रों के प्रयोग की जरूरत को पूरा करने के लिए शरीर पर यह अप्राकृतिक स्थिति थोपी गयी। इसी कारण हमारी प्रकृति के महत्त्वपूर्ण पहलुओं का विकास हुआ है। अर्थात् हमारे हाथ और दिमाग और दक्षता भाषा सामाजिक जीवन की जटिल व्यवस्था का विकास हुआ है। दरअसल दक्षता भाषा और सामाजिक जीवन के दूसरे आयाम हमारे हाथ और दिमाग के कारण उत्पन्न हुए हैं। साथ ही इनके कारण ही हमारे हाथों और दिमाग की सक्रियता भी बढ़ी है। इसी प्रकार मानव निर्मित और शरीर रचना सम्बन्धी बनावटें बेहद स्पष्ट रूप से यह बताती हैं कि हम जो आज है वह स्वनिर्मित है और जब तक हमारा कुछ भी अस्तित्त्व शेष रहता है तब तक हमें इसी तरह आगे बढ़ते रहना होगा।'[26] स्त्री शरीर को आकार प्रदान करने में सामाजिक प्रतिबंध व खूबसूरती के मानकों की भूमिका महत्त्वपूर्ण है। इससे यह बात समझ में आती है कि शरीर निर्मित करने में प्रकृति व संस्कृति दोनों की भूमिका है। प्रकृति व संस्कृति के मध्य कोई स्पष्ट विभाजक रेखा नहीं है। नारीवादी सिद्धान्त में सेक्स/जेंडर भेद चार तरीके से[27] विकसित हुआ।

दूसरा महत्त्वपूर्ण तर्क रेडिकल नारीवादियों का है जो बताती है कि नारीवादियों को लिंगों में व्याप्त अन्तर की उपेक्षा करना ठीक नहीं है। वे कहती हैं कि लिंगों के बीच भेद के लिए मात्र संस्कृति ही जिम्मेदार नहीं है। अगर हम मात्र संस्कृति को जिम्मेदार मानेंगे तो इससे महिलाओं की प्रजनन भूमिका को कम आँका जायेगा। रेडिकल नारीवादी मानती हैं कि पितृसत्तात्मक सामाजिक मूल्यों ने 'महिला सुलभ मूल्यों' का अवमूल्यन किया है। महिला व पुरुषों के बीच कुछ अन्तर है। यह अन्तर उनकी प्रजननकारी भूमिका की वजह से है। स्त्री संवेदनशील है, वह प्रकृति के अत्यधिक निकट है। रेडिकल नारीवादी मानती हैं कि प्यार, दुलार संवेदनशीलता जैसे गुणों को महत्त्व देने की जरूरत है। फ्रीडमेन कहती हैं, 'परवाह और हमदर्दी महिलाओं के नैतिक मानकों मूल्यों और सद्गुणों को परिभाषित करते हैं।'[28] ख्याति प्राप्त नारीवादी चिंतक कैरोल गिलीगन मनोविश्लेषणात्मक दृष्टि से तर्क रखती हैं कि 'आमतौर पर श्रम के लैंगिक विभाजन की वजह से बचपन

में आरम्भ में देखभाल एक स्त्री माँ द्वारा की जाती है। स्त्री–पुरुष वयस्कता हासिल करने की प्रक्रिया भिन्न–भिन्न होती है। लड़के अपनी माता से भिन्न दिखने की कोशिश में वयस्क होते हैं जबकि लड़की माँ जैसी बनने की कोशिश करती हुई व्यस्क होती है।'[29] गिलीगन आगे कहती हैं कि इसका असर यह होता है कि महिला व्यक्तिपरक व सम्बन्धों को महत्त्व प्रदान करते हुए व्यवहार करती है जबकि पुरुष वस्तुपरक होता है। महिलाएं फैसले लेते समय हमदर्दी, चिंता, संवेदनशीलता जैसे कारकों से प्रभावित होती है, वहीं पुरुष अपना फैसला लेते समय इस बात का ध्यान देता है कि समाज किसे सही कहता है किसे गलत।

तीसरे दृष्टिकोण के नारीवादी रेडिकल नारीवादियों के तर्कों को नकारती है वे तर्क देती हैं कि यह भेद जैविक शरीर पर जरूरत से अधिक जोर देता है। ज्यूडिथ बटलर कहती हैं कि 'यदि जेंडर सांस्कृतिक अर्थों का वह लबादा है जो एक 'सेक्स' जिस्म ओढ़ लेता है तो ऐसा नहीं माना जा सकता है कि जेंडर किसी एक रूप में सेक्स से निकलता है।'[30] वह आगे बताती हैं कि 'जेंडर एक पहले से दिए गये सेक्स को प्रदान कर दिया गया सांस्कृतिक अर्थ नहीं है, बल्कि सोचने के एक तरीके व अवधारणात्मक अर्थ में जेंडर जैविक सेक्स की श्रेणी को जन्म देता है।'[31]

ज्यूडिथ बटलर संस्थाओं व्यवहारों व विमर्श से पैदा किए जाने वाले घेरे की बात करते हुए इसके लिए 'हेट्रोसेक्सुअल ग्रिड' शब्द प्रयोग में लाती है। वह बताती हैं कि 'इसे देखने से लगता है कि यह प्राकृतिक है व दोनों सेक्सुअल पहचानों से कोई एक होती है। यह भी माना जाता है कि विपरीत लिंग के प्रति आकर्षण स्वाभाविक है।'[32] वे कहती हैं कि 'इस हेट्रोसेक्सुअल ग्रिड को नकार दे तो मानव की सेक्सुअलिटी उभर कर सामने आ जायगी। यह दृष्टिकोण बताता है कि महिला श्रेणी पर विचार करने से पहले महिला जैसी किसी श्रेणी का अस्तित्त्व नहीं होता है।'[33] जेंडर निर्माण शक्ति संबंधों, मानकों व प्रतिबंधों से तय होता है कि किसे पुरुष कहा जाय व किसको महिला। सेक्स या लिंग को तय करने वाली सबसे शक्तिशाली भाषा बायोमेडिकल साइंस की है। रूथ ब्लियर, एवलिन फाक्स केलर जैसी नारीवादियों ने इसकी आलोचना की। इनका तर्क है कि 'सेक्स शरीर रचना, हार्मोन की संरचना और क्रोमोसोम्स के स्वरूप के आधार पर तय होता है इसी वजह से सेक्स/जेंडर के विभाजन की वजह से जैविक लिंग का अध्ययन बायोमेडिकल साइंस तक सिमट जाता है।'[34] नेली उडशूर्न अपने शोध अध्ययन के माध्यम से यह बतलाती हैं कि कई सदियों से वैज्ञानिक सेक्स को अलग–अलग रूपों में लेते रहे। प्राचीन ग्रीक से 18वीं सदी तक मेडिकल ग्रन्थों में पुरुष और महिला के शरीर को बुनियादी रूप से समान माना जाता रहा।'[35] वह इसे मानवता का एक लिंगीय सेक्स मॉडल का नाम देती हैं व बताती हैं कि इसमें महिलाओं को पुरुष के शरीर का कमतर संस्करण माना गया। बायोमेडिकल विमर्श में यही मॉडल छाया रहा। इन तर्कों को रखने वाली उत्तर–आधुनिकतावादी नारीवादियों ने माना कि वैज्ञानिक तथ्य गहनतम रूप में समाज व संस्कृति में समाहित हैं व सेक्स मानवीय आचरण से निर्मित होता है।

चौथा दृष्टिकोण यह बताता है कि जेंडर बहुत सी पहचानों के घेरे में अवस्थित है। इन पहचानों में जाति, वर्ग, नस्ल एवं धर्म प्रमुख हैं। निवेदिता मेनन कहती हैं कि 'इसका मतलब है कि यह जरूरी नहीं कि एक जैविक श्रेणी के रूप में महिलाओं के हित, जीवन की परिस्थितियाँ या लक्ष्य एक जैसे हों।'[36] महिला आन्दोलनों से यह बात सामने आयी है कि 'महिलाएँ पहले से ही ऐसे अस्तित्त्वमान कर्ता के रूप में नहीं होती हैं, जो महिला आन्दोलनों के राजनीतिक व्यवहार से उत्पन्न हुई है।'[37]

नारीवादी सिद्धान्त की एक महत्त्वपूर्ण उपलब्धि सेक्स/जेंडर भेद है। सेक्स शब्द का उपयोग महिलाओं व पुरुषों के बीच जैविक अन्तर व जेंडर शब्द का प्रयोग सांस्कृतिक अर्थ बताने के लिए किया गया। नारीवादियों ने अपने तर्कों के माध्यम से यह भी बता दिया कि श्रम का लैंगिक भेद किसी भी आधार पर प्राकृतिक नहीं माना जा सकता है व न ही इसे जायज ठहराया जा सकता है। नारीवादी चिंतकों में सेक्स/जेंडर भेद संबंधी विचार कई रूपों में सामने आया। सभी ने यह माना कि सेक्स व जेंडर में भेद है। इनके तर्क में इतनी पेंचीदगी रही कि एक उलझाव सामने आने लगा। यह विचार काफी सटीक है कि प्रकृति से सेक्स का वही रिश्ता है जो संस्कृति का जेंडर से है।

संदर्भ :

---

1 निवेदिता मेनन, "जेंडर", राजीव भार्गव, अशोक आचार्य (सं.) 'राजनीति सिद्धान्त' डार्लिंग किंडरस्ले (इंडिया) प्राइवेट लिमिटेड, नोएडा, 2013, पृ० 222

2 अनिरुद्ध देशपांडे (सम्पा.), डॉ० मृदुला, डॉ० प्रतिभा चावला, 'बीसवीं शताब्दी में विश्व इतिहास के प्रमुख मुद्दे', हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, 2013

3 शुभ्रा परमार, 'नारीवादी सिद्धान्त और व्यवहार', ओरियंट ब्लैकस्वॉन, हैदराबाद, 2019, पृ० 10

4 वही, पृ० 12

5 शर्मिला रेगे, 'सोशियोलाजी ऑफ जेंडर द चैलेन्ज ऑफ फेमिनिस्ट सोशियोलॉजिकल नालेज', सेज पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2003, व शुभ्रा परमार, वही, पृ० 18

6 एलीसन एम. जैग्गर, आयरिश मेनन युंग 'ए कम्पैनियन टू फेमिनिस्ट फिलासफी', ब्लैकवेल पब्लिशिंग, आस्ट्रेलिया, 2005, पृ० 14

7 जूली के. वार्ड, 'फेमिनिज्म एण्ड एनसिएन्ट फिलासफी', राउटलेज, न्यूयार्क, 1996, पृ० 5

8 अनामिका, 'स्त्री विमर्श की उत्तरगाथा', सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, 2014, पृ० 23–24

9 सिमोन दि बुआॅ, 'दि सेकंड सेक्स', प्रभा खेतान (अनु.), हिन्द पाकेट बुक, नई दिल्ली, 2002, पृ० 23

10 कीर्ति चौधरी झा, 'नारीवाद का दार्शनिक विश्लेषण', कला प्रकाशन, वाराणसी, 2015, पृ० 34

11 एलीसन एम जैग्गर, आयरिश मेनन युंग, वही, पृ० 32

12 जॉन स्टुअर्ट मिल, 'द सब्जेक्शन ऑफ वूमेन', प्रगति सक्सेना (अनु०) राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2003, पृ० 70
13 सिमोन दि बुआँ, 'दि सेकंड सेक्स', प्रभा खेतान (अनु०), वही, पृ० 10
14 वही, पृ० 19
15 विश्वनाथ मिश्र, 'पश्चिमी ज्ञानोदय के वैचारिक संकट', ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, दिल्ली, 2019, पृ० 56–57
16 सुसेन मोलर ओकिन, 'वूमेन इन वेस्टर्न पॉलिटिकल थॉट', प्रिंसटन युनिवर्सिटी प्रेस, न्यूजर्सी, 1979, पृ० 200
17 शर्मिला रेगे, वही
18 वही, व शुभ्रा परमार, वही, पृ० 19
19 ब्राडली हेरियर, 'जेंडर की कांसेप्ट पोलिटी प्रेस, यूके, 2013
20 शेफाली मोइत्रा, 'फेमिनिस्ट थॉट एंडोसेन्ट्ररिज्म कम्यूनिकेशन एण्ड ओब्जेक्टिविटी', जादवपुर यूनिवर्सिटी, कोलकाता
21 अनिरुद्ध देश पाण्डे (संपा०), 'बीसवीं शताब्दी में विश्व इतिहास के प्रमुख मुद्दे', हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, 2013 व शुभ्रा परमार, वही, पृ० 20
22 वही, पृ० 311
23 वही
24 निवेदिता मेनन, वही
25 एलिसन जैग्गर, 'फेमिनिस्ट पॉलिटिक्स एण्ड ह्यूमन नेचर', हार्वेस्टर प्रेस, ब्रिगटॉन, 1983, पृ० 109–110
26 डिरीथी डिमरस्टेम, 'द मरमेड एण्ड मिनोचर : सेक्सुअल अरेंजमेंट्स एण्ड ह्यूमन' मैलिस हार्पर एण्डरो, न्यूयार्क, पृ० 22
27 वही, पृ० 225
28 मर्लिन फ्रीडमेन, 'बीऑण्ड केयरिंग : द डी मॉरलाइजेशन ऑफ जेंडर', कनेडियन जर्नल ऑफ फिलॉसफी, अतिरिक्त अंक, पृ० 24
29 केरोल गिलीगन, 'इन अ डिफरेन्ट वॉयस, साइकोलाजी एण्ड वूमेन डेवलमेंट', हार्वर्ड युनिवर्सिटी प्रेस, हार्वर्ड, 1993
30 ज्यूडिथ बटलर, 'जेंडर ट्रबुल रूजलेट', न्यूयार्क, लंदन, 1990, पृ० 6
31 वही
32 निवेदिता मेनन, वही, पृ० 228
33 वही
34 वही
35 वही, पृ० 229
36 वही, पृ० 230
37 वही

***